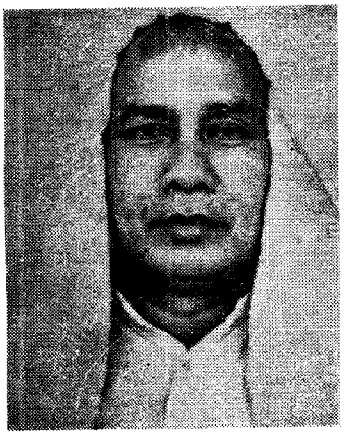

जगतगुरु महामंडलेश्वर
स्वामी शिवानन्दजी शास्त्री,

वैराग्य

प्रवास साधु जीवन का एक विशेष अंग बन गया है। पूज्य विनोबाजी कहा करते हैं--चलते-फिरते समाधि लगाना सीखो। गुफा में बैठ कर समाधि के आदी बनोगे तो संसार के एक प्रिय बच्चे की हलचल से भी तुम्हारे अंदर क्रोध उत्पन्न होगा। श्री रामकृष्ण परमहंस कहा करते थे---मिलीटरी के नौजवान चलते हुवे लेफ्ट-राइट बोला करते हैं, भक्त लोगों को चलते-फिरते 'राम-कृष्ण' रटना चाहिये। भारत की मेरी पदयात्रा में जहाँ कहीं मुझे किसी जैन महामुनि तथा किसी महासतीजी का दर्शन होता, मैं उन्हें हृदय से प्रणाम करता। तपोनिरत साधु पुरुषों को देख कर मेरा सिर अपने आप झुक जाता है।

मैं उनके वैराग्य की मन ही मन खूब प्रशंसा करता हूँ। सुनीतिकारों ने कहा भी है कि सर्वत्र भय है, केवल वैराग्य में ही अभय है।

भोगे रोगभयं कुलेच्युतिभयं वित्ते नृपालाद्भयम्।
मौने दैन्यभयं बले रिपुभयं रूपे जरायाभयम्॥
शास्त्रे वादभयं गुणे खलभयं काये कृतान्ताद्भयम्।
सर्वं वस्तु भयान्वितं भुवि नृणां--वैराग्यमेवाभयम्॥

अर्थात् भोग में रोग का भय है, कुलीनता में पतन का भय है, समृद्धि में राजा का भय है, मौन में दैन्य का भय है, बलवत्ता में शत्रु का भय है। गुणवत्ता में दुष्ट का भय है, शरीर में यमराज का भय है, क्या अधिक कहें। संसार की सभी वस्तु तथा सभी व्यवहार भयपूर्ण हैं, केवल एक वैराग्य ही अभय है।

वस्तुतः अभय देवीसम्पद् है। यह एक महान मानवीय गुण है। साधक के लिये यह साधना का महत्वपूर्ण अंग है। व्यक्ति में अभय का विकास वैराग्य के बिना नहीं हो सकता। पूर्ण वैराग्यवान ये जैन महामुनि तथा महासती अवश्य ही अभय हैं। ये उस अभयपद को अवश्य प्राप्त करने वाले हैं, जिसके लिये सभी तत्ववेत्ताओं ने अपना सर्वस्व अर्पण किया है। भारतीय दर्शन शास्त्रों में वैराग्य को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। नौका चलाने के लिये यथेष्ट जल की बड़ी आवश्यकता है। आध्यात्मिक जीवन एक ऐसी नौका है कि जो वैराग्यरूपी जल के बिना आगे बढ़ ही नहीं सकती।

तपस्या में जैन समाज सबसे आगे है। अब मैं सभी प्रकार के उत्तम वाहनों में बैठ कर घूमता हूं। आज भी पूर्ववत् जहाँ कहीं उन पैदल चलने वाले तपस्वियों को देखता हूँ तो मेरा सिर उनके सामने झुक जाता है।

मन ही मन बोलता हूं--धन्य हैं ये तपस्वी, जो आज इस विमान के युग में भी पैदल चल रहे हैं। आराम के साधन को देख कर भी उसकी प्राप्ति की इच्छा न हो, यही सबसे बड़ी तपस्या है। बदलती हुई इस दुनियां में हम न बदलें, इससे बढ़ कर और कोई तपस्या नहीं।

जिनदत्तसूरि ने कहा---

'बलभोगोपभोगानामुभयोर्दानलाभयोः।
अन्तरायस्तथा निद्राभीरज्ञानं जुगुप्ति तम्॥
हिंसारत्यरती रागद्वेषाव विरतिः स्मरः।
शोको मिथ्यात्वमेते अष्टादश दोषा न यस्य सः॥
'जिनो देवो गुरु·····।

अर्थात् जिनके अंदर उक्त १८ दोष नहीं हैं वे मनुष्थों में देव हैं, जिन हैं, गुरु हैं, वे धन्य हैं, कृतकृत्य हैं।

इन अठारह दोषों में वैराग्यहीनता और भोग-लोलुपता ये दो भय भयानक दोष हैं।

तप के बिना इनकी सिद्धि नहीं हो सकती, अतएव हमारा जीवन तपस्वी हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्हत दर्शन में सम्यक् चारित्र और पाँच महाव्रतों का इस प्रकार वर्णन है—

"संसरणकर्मोच्छित्तावुधतस्य श्रद्धानस्य ज्ञानवलः पापगमन कारणं क्रियानिवृत्तिः सम्यक्चारित्रम्।"

अर्थात् संसार के प्रवर्तन के कारण स्वरूप कर्मों के नष्ट हो जाने पर साधना में तत्पर श्रद्धावान तथा ज्ञानवान साधक का पापों की तरफ ले जाने वाली क्रियाओं से निवृत्त हो जाना ही सम्यक्-चारित्र है।

पांच महाव्रत—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह हैं।

१. न यत्प्रमादयोगेन जीवितव्यपरोपणम्।
चराणां स्थावराणां च तदहिंसा व्रतं मतम्।।

अर्थात् असावधानी या पागलपन से भी जब स्थावर या जंगम किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं की जाती, उसे अहिंसा कहते हैं।

२. प्रियं पथ्यं वचस्तथ्यं सूनृतं व्रतमुच्यते।
तथ्यमपि नो तथ्यप्रियं चाहितं च यत्।।

अर्थात् सुनने में भी सुखद हो और अंतिम परिणाम भी जिसका सुखद हो तथा यथार्थ भी हो, ऐसे वचन को सत्यव्रत कहते हैं।

३. अनादानमदत्तस्यास्तेयव्रतमुदीरितम्।
बाह्याः प्राणा नृणामर्थो हरता तं हता हि ते।।

अर्थात् धन मनुष्य का बाह्य प्राण है, उसे दिये बिना लेने का प्रयत्न न करें। धन-स्वामी की स्वेच्छा के विरुद्ध उसके धन का हरण तो उसके प्राणों का हरण ही समझना चाहिये।

४. दिव्यौदरि ककामानां कृतानुमतकारितैः
मनोवाक्कायतस्त्यागो ब्रह्माष्टादशधापतम्।।

अर्थात् सभी प्रकार के भोग्य से मन, वचन तथा कर्म द्वारा उपरमता ब्रह्मचर्य है।

५. सर्वभावेषु मूर्च्छायास्त्यागः स्यादपरिग्रहः।
यदसत्स्वपि जायते मूर्च्छया चित्तविप्लवः।।

अर्थात् सभी वस्तुओं में इच्छा का त्याग अपरिग्रह है। क्योंकि इच्छा के कारण असत् पदार्थों में भी चित्तविकृति हो जाती है।

इस प्रकार आचार पक्ष को अत्यधिक महत्व दिया गया है। विचार भी समन्वयवादी दीखता है। आज के वैचारवैविध्य में जहाँ तक हो सके उदारभाव से समन्वय के लिये प्रयत्नशील रहना योग्य ही है।

'राजेन्द्र-ज्योति' की वर्तमान समय में विशेष आवश्यकता है। क्योंकि केवल संत पुरुष ही प्रवास कर रहे हैं ऐसा नहीं है। अपितु-प्रवासी तो सभी हैं। परन्तु आज की आम जनता प्रायः अंधेरे में ही प्रवास कर रही है, ठोकरें खा रही है, परेशान हो रही है। हमें उन्हें बचाना है। उनके दुःख को दूर करना है, उन्हें खड्डे में नहीं गिरने देना है—'राजेन्द्रज्योति प्रदान कर। □

(ध्यान-साधना : आधुनिक संदर्भ. . . .पृष्ठ ८८ का शेष)

प्रारंभ में हम भौतिक और बाहरी विघ्नों पर विजय प्राप्त करते हैं पर जब शक्ति बहुत अधिक बढ़ जाती है तब हम आन्तरिक शत्रुओं, वासनाओं पर भी विजय प्राप्त कर लेते हैं। आज आन्तरिक खतरे अधिक सूक्ष्म और बलशाली बन गये हैं उन्हें वशवर्ती बनाने के लिए ध्यानाभ्यास आवश्यक है।

ध्यान और सामाजिकता का प्रश्न

ध्यान-साधना आध्यात्मिक ऊर्जा का स्रोत तो है ही, सामाजिक शालीनता और विश्वबन्धुत्व की भावना वृद्धि में भी उससे सहायता मिल सकती है। यह जीवन के पलायन नहीं, वरन् जीवन को ईमानदार, सदाचारनिष्ठ, कलात्मक और अनुशासनबद्ध बनाये रखने का महत्त्वपूर्ण साधन है। यह एक ऐसी संगम-स्थली है जहां विभिन्न धर्मों, जातियों और संस्कृतियों के लोग एक साथ मिल बैठ परम सत्य से साक्षात्कार कर सकते हैं, अपने आपको पहचान सकते हैं, शर्त केवल यही है कि इसे भोगोन्मुख होने से रोका जाय। □

जो व्यक्ति क्रोधी होता है अथवा जिसका क्रोध कभी शान्त नहीं होता, जो सज्जन और मित्रों का तिरस्कार करता है, जो विद्वान् होकर भी अभिमान रखता है, जो दूसरों के मर्म प्रकट करता है और अपने कुटुम्ब अथवा गुरु के साथ भी द्रोह करता है, किसी को कर्कश वचन बोल कर सन्ताप पहुंचाता है और जो सबका अप्रिय है, वह पुरुष अविनीत, दुर्गति और अनादर का पात्र है। ऐसे व्यक्ति को आत्मोद्धार का मार्ग नहीं मिलता है।

—राजेन्द्र सूरि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org